विक्रम संवत-२०३५, श्रावण शुक्ल - १०, गुरुवार, तारीख २१-८-१९८०
वचनामृत- २१६, २१७ प्रवचन-१४

जो वास्तव में संसार से थक गया है, उसी को सम्यग्दर्शन प्रगट होता है। वस्तु की महिमा बराबर ख्याल में आ जाने पर वह संसार से इतना अधिक थक जाता है कि 'मुझे कुछ भी नहीं चाहिए, एक निज आत्मद्रव्य ही चाहिए' ऐसी दृढ़ता करके बस 'द्रव्य सो ही मैं हूँ' ऐसे भावरूप परिणमित हो जाता है, अन्य सब निकाल देता है।

दृष्टि एक भी भेद को स्वीकार नहीं करती। शाश्वत द्रव्य पर स्थिर हुई दृष्टि यह देखने नहीं बैठती कि 'मुझे सम्यग्दर्शन या केवलज्ञान हुआ या नहीं'। उसे—द्रव्यदृष्टिवान जीव को—खबर है कि अनन्त काल में अनन्त जीवों ने इस प्रकार द्रव्य पर दृष्टि जमाकर अनन्त विभूति प्रगट की है। द्रव्यदृष्टि होने पर, द्रव्य में जो-जो हो, वह प्रगट होता ही है; तथापि 'मुझे सम्यग्दर्शन हुआ, मुझे अनुभूति हुई' इस प्रकार दृष्टि पर्याय में चिपकती नहीं है। वह तो प्रारंभ से पूर्णता तक, सबको निकालकर, द्रव्य पर ही जमी रहती है। किसी भी प्रकार की आशा बिना बिलकुल निस्पृहभाव से ही दृष्टि प्रगट होती है॥२१६॥

वचनामृत। २१६, २१६। २०० चल गया है। किसी ने यहाँ लिखा है। **जो वास्तव में संसार से थक गया है,...** सर्वार्थसिद्धि का अवतार करने में थकान लगी हो, ऐसी अन्दर व्यवहार प्रतीति हुई हो कि अनन्त काल में अनन्त अवतार नरक, निगोद आदि के अनन्त किये और अभी भी यदि आत्मा का ज्ञान न हुआ तो जन्म-मरण चौरासी का चक्कर मिटेगा नहीं। **वास्तव में संसार से थक गया है,...** पूरा संसार। विकल्प से, विकल्प से भी थक गया हो। क्योंकि विकल्प है, वह भी दुःख और राग है। आहाहा! **उसी को सम्यग्दर्शन प्रगट होता है।** यह शर्त। **वास्तव में संसार से थक गया है, उसी को सम्यग्दर्शन प्रगट होता है।** अन्तर आनन्द का कन्द प्रभु, वह सर्व संसार की कल्पनाजाल में से रुचि हटकर,

रुचि अन्दर में जम जाए, तब आनन्द की दशा का अनुभव हो, तब सम्यग्दर्शन प्रगट होता है। आहाहा! संसार की कोई भी वासना, बड़ी समृद्धि, कुटुम्ब-कबीला, इज्जत, प्रसिद्धि, मान-सन्मान, उसमें कोई भी बात अन्दर रह गयी तो संसार की थकान लगी नहीं। आहाहा! संसार का... वास्तव में कहा न?

ऐसे तो बाहर से संसार छोड़कर अनन्त बार साधु हुआ है, परन्तु वह संसार नहीं है। संसार तो अन्दर में संसरण इति संसारः। संसार, कोई आत्मा की पर्याय को छोड़कर बाहर में नहीं रहता। अन्तर में जो चौरासी लाख योनि का बीज मिथ्यात्व आदि, उससे जब तक अन्दर में थकान न लगे तो अन्तर में नहीं उतर सकता। आहाहा! यह शर्त।

वास्तव में संसार से थक गया है,... थकान लगी है, अन्दर दुःख लगता है। वह अन्तर आनन्द की खोज करता है। जिसको विकल्प आदि दुःख लगे, संसार विकल्प भी संसार है। आहाहा! क्योंकि वह दुःख है, वह संसार है। उससे थकान लगे, वह अन्तर में जाकर सम्यग्दर्शन प्रगट कर सके। आहाहा! यह शर्त। **वस्तु की महिमा बराबर ख्याल में आ जाने पर...** वस्तु भगवान आत्मा क्या चीज़ है, यह ख्याल में आ जाने पर **वह संसार से इतना अधिक थक जाता है...** आहाहा! क्या कहा? **वस्तु की महिमा बराबर ख्याल में आ जाने पर...** चैतन्यप्रभु अनन्त आनन्द और अनन्त ज्ञानादि अनन्त गुण का खजाना, परमात्मस्वरूप आत्मा... आहाहा! इसकी जिसको महिमा ख्याल में आ जाए... आहाहा! तब संसार से इतना अधिक थक जाता है... आहाहा! कि '**मुझे कुछ भी नहीं चाहिए,**'... मान, सम्मान, दुनिया की प्रशंसा, दुनिया में मैं दूसरों से अधिक हूँ, ऐसा एक अभिमान अन्दर है, प्रभु! बहुत सूक्ष्म बात है। आहाहा!

संसारी प्राणी की चीज़ देखकर उसमें कुछ भी अपने में गहराई में अधिकता अपनी लगे और पर की अधिकता न लगे। परवस्तु दुःखरूप ही अधिक है। मैं उससे भिन्न आनन्द अधिक हूँ। आहाहा! ऐसा अन्तर भाव में पुण्य के विकल्प से भी थककर... क्योंकि अशुभभाव का भी अभ्यास अनन्त काल का है, ऐसे शुभभाव का भी अभ्यास प्रभु! अनन्त काल (का) है। अनन्त काल का है। नौवीं ग्रैवेयक अनन्त बार उत्पन्न हुआ है। वह शुभभाव का अभ्यास तो अनन्त काल का है। उससे भी थकान जाए। आहाहा! कठिन बात है।

इतना अधिक थक जाता है कि 'मुझे कुछ भी नहीं चाहिए, एक निज आत्मद्रव्य ही चाहिए'... भगवान आत्मा चैतन्यरत्न अमूल्य रत्न, जिसकी कोई कीमत नहीं, जिसका कोई मोल नहीं, ऐसी कोई चीज़ मैं अन्दर हूँ, ऐसा जिसको ख्याल में आता है, **'एक निज आत्मद्रव्य ही चाहिए'...** मुझे तो एक आत्मद्रव्य हो। पर्याय भी नहीं। आहाहा! भगवान आत्मद्रव्य जो त्रिकाली परमात्मस्वरूप अनन्त आनन्द के स्वभाव से भरा पड़ा प्रभु, ऐसी चीज़ की महिमा आकर, यही एक मुझे चाहिए, **ऐसी दृढ़ता करके बस 'द्रव्य, सो ही मैं हूँ'...** ओहो..! राग तो नहीं, पर्याय भी नहीं। पर्याय तो मानती है। **'द्रव्य, सो ही मैं हूँ'...** यह कहीं द्रव्य नहीं मानता है। द्रव्य तो ध्रुव है। आहाहा! पर्याय में ऐसी थकान लगे कि पर्याय में ऐसा लगे कि यह द्रव्य है, वही मैं हूँ। आहाहा! कोई विकल्पमात्र मेरी चीज़ नहीं। दुनिया में इज्जत मिले या अधिकता हो, वह कोई वस्तु नहीं है, प्रभु! आहाहा!

सातवीं नरक का नारकी, अरे..! प्रभु ने तो वहाँ तक कहा न, कुन्दकुन्दाचार्य ने, कोई महामुनि समकिती आनन्द में थे, कोई सहज ऐसा दोष लग गया कि असुरकुमार का बन्धन हो गया। ओहोहो! फिर भी अन्दर में खटक बहुत है। आहाहा! छद्मस्थ है, अन्तर प्रेम का प्याला फट गया है। आहा..! तो भी कोई कारण से अन्दर में सहज कोई चारित्र का दोष, हाँ! श्रद्धा का नहीं, थोड़ा चारित्र का दोष लगे तो असुर में उत्पन्न होता है न। छठी गाथा में कहा न। प्रवचनसार। एक ओर प्रभु ऐसा कहे कि सम्यग्दृष्टि तो वैमानिक देव में ही उत्पन्न हो, मनुष्य, हों! मनुष्य, नारकी ... परन्तु मनुष्य समकिती तो वैमानिक देव में ही उत्पन्न होते हैं। स्त्रीपने नहीं, भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिष में नहीं। आहाहा! दूसरी ओर स्वयं ऐसा कहे, भगवान कुन्दकुन्दाचार्य स्वयं कहे, दुनिया को विरोध लगे। विरोध नहीं है, प्रभु! उन्होंने जगत को देख लिया है। पंचम काल है, अन्दर महा उग्र पुरुषार्थ से आगे बढ़ा है, परन्तु उसमें कहीं कुछ ऐसा भाव में रह जाए तो कोई असुरकुमार में उत्पन्न हो जाए, परन्तु हम कहते हैं कि वहाँ से निर्वाण प्राप्त होगा। अन्तर में थक गया है। अन्दर कोई प्रमाद से ऐसा कोई भाव आ गया कि असुरकुमार का आयुष्य बँध गया। आहाहा! वह तो मिथ्यात्व में बँधता है। चारित्रदोष तो कोई अनन्तवें भाग में नहीं है। मिथ्यात्व का दोष तो बड़ा मुख्य दोष यह है। अनन्त संसार का कारण ही मिथ्यात्व है। आहा...!

मिथ्यात्व गया और समकित एवं मुनि हुआ, तो भी भगवान कुन्दकुन्दाचार्य को

ऐसा लगा कि कोई ऐसा साधु होगा, कदाचित् कोई असुरकुमार में जाएगा। आहाहा! गजब बात! पंचम काल है। परन्तु सम्यग्दर्शन लेकर तो नहीं जाएगा। भले उत्पन्न होगा पहले मिथ्यात्व में, बाद में वहाँ सम्यग्दर्शन पायेगा। असुरकुमार में भी। जैसे सातवीं नरक में जानेवाला सब मिथ्यादृष्टि ही जाते हैं और निकलते समय सब मिथ्यादृष्टि ही निकलते हैं। बीच के काल में कोई समकित प्राप्त करते हैं। कोई, असंख्य जीव में से कोई। असंख्य में से कोई असंख्यवें भाग में। आहाहा! तो उसका भी ख्याल करके भगवान ने कहा कि मिथ्यात्व लेकर गया और फिर मिथ्यात्व लेकर निकलेगा। भले बीच में सम्यग्दर्शन, अनुभव हो जाएगा।

यहाँ तो यह कहते हैं कि थोड़ी भी थकान न लगे और कहीं भी संसार के कोई भी विकल्प में मिठास रह जाए, कोई चिन्ता में, कोई विकल्प में... आहाहा! तो उसे आत्मद्रव्य ही चाहिए, ऐसी दृढ़ता नहीं आती। यहाँ तो आत्मद्रव्य ही चाहिए। आत्मद्रव्य ही। 'ही' लिया है। एकान्त। एकान्त यह है। दूसरा नहीं, यही अनेकान्त है। आत्मद्रव्य भी चाहिए और राग भी चाहिए, यह अनेकान्त नहीं। आहाहा! लोग ऐसा कहते हैं कि निश्चय भी हो और व्यवहार भी हो, यह अनेकान्त है। ऐसा नहीं है। निश्चय है, वही लाभकारक है; व्यवहार लाभकारक थोड़ा भी नहीं, उसका नाम अनेकान्त है।

यहाँ भी वही कहते हैं, **ऐसी दृढ़ता करके बस 'द्रव्य, सो ही मैं हूँ'...** आहाहा! मानती है पर्याय, परन्तु मानती है कि मैं द्रव्य हूँ। आहाहा! गजब बात है! द्रव्य का कभी अभ्यास नहीं किया। द्रव्य क्या चीज़ है अन्दर? आहाहा! यह कहते हैं, एक आत्मद्रव्य ही चाहिए। एकान्त कहा। **ऐसी दृढ़ता करके बस 'द्रव्य, सो ही मैं हूँ'...** आहाहा! भगवान आत्मा अनन्त चैतन्य रत्नाकर देव, अनन्त चैतन्य रत्नाकर देव की प्रतीति, अनुभव में प्रतीति, मात्र अकेली प्रतीति नहीं। उसका आनन्द के अनुभव में प्रतीति कि यह आत्मा आनन्दमय है, पूरा आत्मा पूर्ण अखण्ड अभेद चीज़ है, ऐसी प्रतीति द्रव्य, सो ही मैं हूँ, बस। आहाहा! बाकी कोई चीज़ मुझे नहीं चाहिए। आहाहा!

ऐसे भावरूप परिणमित हो जाता है,... द्रव्य, सो ही मैं हूँ। (उसमें) तो परिणमन नहीं है। द्रव्य, सो ही मैं हूँ, ऐसा परिणमन पर्याय में होता है। आहाहा! भावरूप परिणमन। अन्तर की निर्विकल्पदशा-पर्याय। निर्विकल्प चीज़ है, उसकी निर्विकल्पदशा में वह

प्रतीति और अनुभव होता है तो भावरूप परिणमित हो जाता है। भावरूप परिणमित हो जाता है। जैसा द्रव्य है, ऐसा ही परिणमन हो जाता है। उसका नाम सम्यग्दर्शन है। आहाहा! **अन्य सब निकाल देता है।** आहाहा! कोई भी विकल्प छोड़ देता है। मेरे लाभ की चीज़ नहीं, वह नुकसान की चीज़ है। आहाहा! थोड़ी सूक्ष्म बात है। अपने सिवा कोई भी परद्रव्य की, पंच परमेष्ठी की कल्पना, भक्ति का विकल्प... आहाहा! वह सब निकाल देता है। दृष्टि में से निकाल देता है, अस्थिरता में आ जाता है। अस्थिरता में आ जाओ, परन्तु दृष्टि में से निकाल देता है। आहाहा!

दृष्टि एक भी भेद को स्वीकार नहीं करती। दृष्टि-सम्यग्दृष्टि एक भी भेद को स्वीकार नहीं करती। पर का तो स्वीकार करती नहीं... आहाहा! यह बहिन की वाणी। अनुभव में से बोलकर निकली है। आहाहा! आये नहीं। इस समय नहीं आते हैं, कमजोरी है न। **दृष्टि एक भी भेद को स्वीकार नहीं करती।** पर का तो स्वीकार नहीं करती, मुझे लाभदायक है, ऐसे। परद्रव्य मुझे लाभदायक है, ऐसा स्वीकार तो है नहीं, परन्तु द्रव्य और गुण, ऐसे भेद का भी स्वीकार नहीं करती। आहाहा! दृष्टि तो अभेद का स्वीकार करती है। अकेला चिदानन्द भगवान प्रभु, गुण और गुणी की एकता, इसको ही दृष्टि में (स्वीकारती है)। दृष्टि है पर्याय, दृष्टि है अवस्था, परन्तु वह स्वीकार पूर्ण का करती है। आहाहा! उस पर्याय की कीमत कितनी होगी! लोगों को अन्दर की प्रतीति-श्रद्धा की कीमत नहीं है। कुछ आचरण करे, फलाना छोड़े, यह छोड़ा, ब्रह्मचर्य ले लिया, बाहर से कुछ छोड़ दिया तो कीमत हो जाए। आहाहा!

यहाँ कहते हैं, **दृष्टि एक भी भेद को स्वीकार नहीं करती। शाश्वत द्रव्य पर स्थिर हुई...** आहाहा! ध्रुव शाश्वत पदार्थ भगवान, उस पर दृष्टि स्थिर हुई... आहाहा! **यह देखने नहीं बैठती... शाश्वत द्रव्य पर स्थिर हुई दृष्टि...** ध्रुव पर स्थिर हुई, वह दृष्टि ऐसा देखती नहीं.. क्या? **यह देखने नहीं बैठती कि 'मुझे सम्यग्दर्शन या केवलज्ञान हुआ या नहीं'।** आहाहा! पर्याय पर लक्ष्य करती नहीं। ज्ञान हो जाता है, परन्तु दृष्टि बदलती नहीं। आहाहा! ऐसी सूक्ष्म बात है। लोगों को बाहर की थोड़ी क्रिया हो, आचरण हो तो कुछ भभका लगे, कुछ त्याग किया, कुछ धर्म करते हैं ऐसा लगे। आहाहा!

यहाँ तो कहते हैं, विकल्पमात्र से थककर अन्तर्दृष्टि द्रव्य पर हुई तो वह दृष्टि भेद

को स्वीकार नहीं करती। पर को तो स्वीकार नहीं करती, भेद को भी स्वीकार नहीं करती। आहाहा! भेद है। भगवान आत्मा में अनन्त गुण का भेद है परन्तु वह भेद को स्वीकार नहीं करती। अभेद पर दृष्टि (स्थिर हो गई है)। आहाहा! दृष्टान्त दिया था न? मेरी माँ, मेरी माँ। छोटी लड़की माँ की अंगुली से छूट जाए। आठ साल की या छह साल की हो, पुलिस पूछे तो एक ही कहे। हमने सुना है, पोरबन्दर। छोटी लड़की वहाँ गुम हो गयी। अपासरा के पीछे। पुलिस आयी, पूछे, कुछ भी पूछे, परन्तु मेरी माँ, मेरी माँ। बस, एक ही बात। ऐसे समकिती को एक मेरा द्रव्य, ऐसी एक ही बात है। आहाहा! दुनिया मानो, न मानो और दुनिया अज्ञान की भी महिमा करती है। हाथी के हौदे पर बैठाये तो भी उसे शंका नहीं होती कि मिथ्यादृष्टि को यह? और मैं... मेरे पास सब है। आहाहा! मेरे पास सब है, मुझे कुछ नहीं चाहिए। आहाहा!

अतीन्द्रिय आनन्दरत्न का खजाना मिल गया। आहाहा! अतीन्द्रिय आनन्द हीरा, अनन्त हीरा का खजाना मिल गया। उसके समक्ष भेद का भी दिखावा नहीं। भेद को भी दृष्टि नहीं देखती। आहाहा! मुझे सम्यग्दर्शन हुआ या नहीं, उस पर जोर नहीं है। ख्याल आ जाए कि अनुभव हो गया। परन्तु उस पर जोर नहीं है। समझ में आया? जोर द्रव्य पर एकाकार है। मेरी माँ, मेरी माँ, मेरी माँ वह है। आहाहा!

भगवन्! द्रव्य और पर्याय में भी बड़ा भेद है। द्रव्य इतना शक्तिवन्त है कि साक्षात् परमात्मा है। आहाहा! साक्षात् परमात्मा है, तो पर्याय में परमात्मा होता है। क्या कहते हैं? ऐनलार्ज। ऐनलार्ज कहते हैं न? छोटा हाथी हो वह (बड़ा हो जाता है)। यह तो क्षेत्र छोटा है, भाव छोटा नहीं है। भाव-इतनी शक्ति है कि उसको ऐनलार्ज करे, एकाकार हो तो केवलज्ञान प्राप्त हो जाएगा। आहाहा! बात रूखी लगे। कुछ करना हो तो उसे (लगे, कुछ किया)। क्योंकि करने का अभ्यास अनादि से हो गया है। करना ऐसा अभ्यास हो गया है। और करना, वह तो मिथ्यात्व है। राग का करना और देह की क्रिया मेरे से होती है, ऐसी मान्यता सब मिथ्यात्व है। आहाहा! परन्तु अनादि का अभ्यास हो गया है। उससे छूटना महा पुरुषार्थ द्रव्य का होता है और द्रव्य चमत्कारिक चीज़ की कीमत और महिमा आ जाती है, तब यह बाहर की महिमा छूट जाती है। आहाहा! ऐसा धर्म।

मुझे सम्यग्दर्शन हुआ कि नहीं, उसका भी ख्याल नहीं करती। ख्याल ज्ञान में आ

जाए, फिर भी दृष्टि बदलती नहीं। दृष्टि में दौलत एक भगवान ही रहे। पूर्णानन्द का नाथ उसकी दृष्टि में तिरता है। आहाहा! यहाँ तो केवलज्ञान हुआ या नहीं, ... खलास हो गया। आहाहा! दृष्टि ही नहीं स्वीकारती, ऐसा कहते हैं। केवलज्ञान हुआ तो भी दृष्टि को उसकी विशेषता नहीं है। क्योंकि दृष्टि में तो ऐसा केवलज्ञान, अनन्त केवलज्ञान, अनन्त सादि-अनन्त केवलज्ञान की पर्याय एक ज्ञानगुण में पड़ी है। केवलज्ञान तो एक समय की स्थिति है। ऐसा सादि-अनन्त केवलज्ञान। आहाहा! उत्पन्न हुआ बाद में भविष्य में अनन्त काल रहेगा। कभी अन्त नहीं। ऐसी पर्याय का पिण्ड ज्ञानगुण है। जैसे एक गुण इतना है तो अनन्त-अनन्त गुण का पिण्ड द्रव्य है। आहाहा! ऐसे द्रव्य की जिसको अन्तर्दृष्टि हुई तो केवलज्ञान हुआ या नहीं, उसकी भी दरकार नहीं। क्योंकि वह तो पर्याय है। आहाहा! ऐसी बात है।

उसे—द्रव्यदृष्टिवान जीव को—खबर है कि अनन्त काल में अनन्त जीवों ने... अनन्त काल में अनन्त जीवों ने **इस प्रकार द्रव्य पर दृष्टि जमाकर...** अनन्त (जीव) मोक्ष पधारे। छह महीने और आठ समय में ६०८ तो हमेशा मुक्ति में जाते हैं। यहाँ से अभी नहीं जाते हैं तो महाविदेह से जाते हैं। अभी केवलज्ञान (पाकर) मोक्ष जाते हैं। आहाहा! कहते हैं कि **द्रव्यदृष्टिवान जीव को—खबर है कि अनन्त काल में अनन्त जीवों ने इस प्रकार द्रव्य पर दृष्टि जमाकर अनन्त विभूति अनन्त प्रगट की है।** आहाहा! अपना द्रव्य अर्थात् सामान्य ध्रुव नित्यानन्द प्रभु सच्चिदानन्द सत् सत्, बस। पूर्ण सत् (हूँ), ऐसा जहाँ दृष्टि हुई... आहाहा!

इस प्रकार द्रव्य पर दृष्टि जमाकर अनन्त विभूति प्रगट की है। अनन्त जीवों ने, अनन्त जीवों ने अनन्ती विभूति प्रगट की है। ऐसा नहीं है कि दुर्लभ है, इसलिए प्रगट न हो। दुर्लभ है। दुर्लभ भावना में आता है, परन्तु असम्भव नहीं है। असम्भव नहीं है। दुर्लभ अर्थात् महापुरुषार्थ चाहिए असम्भव नहीं है, नहीं हो सके, ऐसी बात नहीं है। आहाहा! समझ में आया? अनन्त-अनन्त पुरुषार्थ चाहिए, ऐसा जानते हैं परन्तु असम्भव है, नहीं हो सकता - ऐसा नहीं मानते। आहाहा! सम्यग्दृष्टि अनन्त जीवों ने विभूति प्रगट की है।

द्रव्यदृष्टि होने पर, द्रव्य में जो-जो हो वह प्रगट होता ही है;... आहाहा! अधिकार तो बहुत अच्छा (आया है)। किसी ने कागज में लिखा है। कागज में बोल लिखे हैं।

किसने लिखे हैं, मालूम नहीं। यहाँ रखा है तो उस हिसाब से पढ़ते हैं। आहाहा! **द्रव्यदृष्टि होने पर, द्रव्य में जो-जो हो...** द्रव्य अर्थात् पदार्थ प्रभु, उसकी दृष्टि में जब द्रव्य पर हो तो द्रव्य में जो-जो है, द्रव्य में जो-जो है, अनन्त चमत्कृति चैतन्य के अनन्त गुण चमत्कारिक चीज़ है, वह सब प्रगट होता है। अन्दर में है, वह प्रगट होता है। आहाहा! **वह प्रगट होता ही है;...** आहाहा! ही है। होता ही है। अन्दर में है और प्राप्त की प्राप्ति न हो, ऐसा नहीं बनता। आहाहा! ऐसी दृष्टि जम गई कि प्राप्त की प्राप्ति। है, वह मिलता है, उसमें नवीन क्या है? क्षायिक समकित हो, मन:पर्ययज्ञान हो, तो भी उसमें क्या? वह तो अनन्तवें भाग में वह चीज़ निकली है। अन्तर तो अनन्त... अनन्त... अनन्त... चमत्कारिक चीज़ पड़ी है। आहाहा!

वह प्रगट होता ही है; तथापि 'मुझे सम्यग्दर्शन हुआ, मुझे अनुभूति हुई' इस प्रकार दृष्टि पर्याय में चिपकती नहीं है। आहाहा! सम्यग्दृष्टि की दृष्टि ध्रुव पर जम गई। अनुभूति हुई, वहाँ चिपकती नहीं, वहाँ नहीं चिपकती। आहाहा! वहाँ रुकते नहीं। मुझे अनुभूति हो गई, बस, वहाँ सन्तोष हो गया - ऐसा है नहीं। आहाहा! **मुझे अनुभूति हुई' इस प्रकार दृष्टि पर्याय में चिपकती नहीं है।** आहाहा! अवस्था में अवस्थायी चीज़ की दृष्टि के जोर में; अवस्थायी, जिसमें अवस्था प्रगट होती है - ऐसा अवस्थायी द्रव्य, ऐसी दृष्टि हुई, उसको अवस्था पर से दृष्टि उठ जाती है। आहाहा! यह बात है। लोगों को कठिन लगे।

भगवान ने यही कहा है। कुन्दकुन्दाचार्य ने तो ११वीं गाथा में एक ही कहा, **'भूदत्थमस्सिदो खलु'।** भूतार्थ त्रिकाल भगवान द्रव्य, उसका आश्रय लेने से सम्यग्दर्शन होता है। आहाहा! ११वीं गाथा में शुरु किया है। त्रिकाल भूतार्थ एक समय में त्रिकाली चीज़। आहाहा! उसके आश्रय से, उसके अवलम्बन से, उसकी महिमा जागने से सम्यग्दर्शन होता है। दूसरा कोई उसका उपाय नहीं। आहाहा!

इस प्रकार दृष्टि पर्याय में चिपकती नहीं है। आहाहा! पर्याय उत्पन्न होती है, परन्तु वहाँ दृष्टि रहती नहीं। दृष्टि का जोर तो द्रव्य पर है। आहाहा! जहाँ जिस स्थान में जाना हो, उस स्थान में लक्ष्य होता है। बीच में मकान, गाँव आदि बहुत आते हैं। सबको छोड़ देता है। कहीं अटकता नहीं। मुझे तो सिद्धपुर जाना है। सिद्धपुर जाने का रास्ता क्या? यह प्रश्न

आया है शास्त्र में। मुझे तो सिद्धपुर जाना है। सिद्धपुर जाने का रास्ता क्या? दूसरा कोई रास्ता पूछता नहीं। आहाहा! कोई कहे कि, वह बाड़ है, थूहर की बाड़ है, उसके बीच में चले जाओ। ऐसे प्रतिकूलता-थूहर की बाड़ बीच में आती है, परन्तु उसे छोड़कर अन्दर चला जा। आहाहा! वस्तु ऐसी है, बापू! आहाहा! लोगों को एकान्त लगे। बाह्य आचरण के समक्ष, बाह्य आचरण के समक्ष यह तुच्छ लगे। बाह्य आचरण हो वह उसे विशेष लगे। यहाँ कहते हैं कि बाह्य आचरण की तो कोई कीमत नहीं है। परन्तु सम्यग्दर्शन, अनुभूति (हुई), उस पर भी उसकी दृष्टि चिपकती नहीं। आहाहा! दृष्टि में तो भगवान अन्दर बैठा है, सर्वज्ञ भगवान के स्थान में-बैठक में बैठा है। आहाहा! धन्य भाग्य! ऐसी बात है, प्रभु! यह तो बहिन ऐसा शब्द बोले थे, उसे लिख लिया। आहा..! अन्तर की अनुभूति से यह भाषा आयी है।

अनुभूति हुई' इस प्रकार दृष्टि पर्याय में चिपकती नहीं है। वह तो प्रारंभ से पूर्णता तक,... प्रारम्भ से पूर्णता तक, शुरुआत से पूर्णता तक। शुरुआत सम्यग्दर्शन, पूर्ण केवलज्ञान। आहाहा! **प्रारंभ से पूर्णता तक, सबको निकालकर,...** बीच की दशा जो आती है, सबकी दृष्टि छोड़कर। आहाहा! दृष्टि द्रव्य पर जम गई है। दृष्टि पर्याय को स्वीकारती ही नहीं। आहाहा! पर्यय द्रव्य को स्वीकारती है। स्वीकार पर्याय में होता है न? वेदन और कार्य तो पर्याय में होता है, ध्रुव में काम होता नहीं। परन्तु उस पर्याय का कार्य सम्यक् कब कहने में आये? कि द्रव्यदृष्टि आयी, लक्ष्य में-दृष्टि में (द्रव्य) आया तब। आहाहा!

वह तो प्रारंभ से पूर्णता तक, सबको निकालकर, द्रव्य पर ही जमी रहती है। आहाहा! शुरुआत से विकल्प छोटा या बड़ा, सबको निकालकर दृष्टि पहले से ही अन्त तक द्रव्य पर ही रहती है। आहाहा! २१६। सोलह, सोलह। २१६। आहाहा! यह तो बहिन के अनुभव के वचन हैं। अन्तर आनन्द के अनुभव में से निकले हुए वचन हैं। कोई कृत्रिम नहीं है, किसी का रटा हुआ नहीं, किसी का पढ़कर नहीं। आहाहा! अन्तर की बातें हैं, प्रभु! क्या करें? अन्तर की बातें अन्तर को जाननेवाले जाने। आहाहा! बाह्य दिखाववाले अन्तर की बात की कीमत नहीं जानते। आहाहा! **द्रव्य पर ही जमी रहती है।**

किसी भी प्रकार की आशा बिना... जहाँ भगवान मिल गये, फिर आशा क्या?

भगवान ही केवलज्ञान प्राप्त करवायेंगे। आहाहा! दूज उगी है तो पूर्णिमा होगी ही। आहाहा! ऐसे सम्यग्दर्शन-दूज अन्दर से उगी, दूज का ज्ञान है, पूर्ण का ज्ञान है और बीच में अवरोध कितना है, उसका भी ज्ञान है। आहाहा! **किसी भी प्रकार की आशा बिना बिलकुल निस्पृहभाव से ही दृष्टि प्रगट होती है।** आहाहा! है न? **किसी भी प्रकार की आशा बिना बिलकुल निस्पृहभाव से ही दृष्टि प्रगट होती है।** २१६ (पूरा हुआ)। अब २१७ है। इसमें लिखा है, कोई रखकर गया है।

द्रव्य में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य सब होने पर भी कहीं द्रव्य और पर्याय दोनों समान कोटि के नहीं हैं; द्रव्य की कोटि उच्च ही है, पर्याय की कोटि निम्न ही है। द्रव्यदृष्टिवान को अन्तर में इतना अधिक रसकसयुक्त तत्त्व दिखायी देता है कि उसकी दृष्टि पर्याय में नहीं चिपकती। भले ही अनुभूति हो, परन्तु दृष्टि अनुभूति में—पर्याय में—चिपक नहीं जाती। 'अहा! ऐसा आश्चर्यकारी द्रव्यस्वभाव प्रगट हुआ अर्थात् अनुभव में आया!' ऐसा ज्ञान जानता है, परन्तु दृष्टि तो शाश्वत स्तम्भ पर—द्रव्यस्वभाव पर—जमी सो जमी ही रहती है॥२१७॥

२१७। **द्रव्य में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य सब होने पर भी...** २१७। द्रव्य अर्थात् पदार्थ। बहुत लोग (आये हैं)। शान्ति रखते हैं। बहुत लोग है। कितने तो ऊपर बैठे हैं। अभी और आयेंगे। दूज पर, बहिन की दूज पर नौ लोग तो हीरा से बधायेंगे। उनका पूरा घर आयेगा। दूसरे भी आयेंगे। लोग तो आयेंगे। आहाहा! **द्रव्य में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य सब होने पर भी...** क्या कहा? ये जो द्रव्य है न? उसमें तीनों हैं। अपना द्रव्य त्रिकाली, उसमें अनन्त गुण और अनन्ती पर्याय। एक समय में एक पर्याय नहीं है, अनन्ती पर्याय (है)। आहाहा! क्योंकि कार्य तो पर्याय में होता है न। गुण और द्रव्य में कार्य नहीं होता। गुण और द्रव्य तो ध्रुव है। आहाहा! अनन्ती पर्याय बाह्य प्रगट है, वह कार्य है। उस कार्य का कारण त्रिकाली द्रव्य-गुण है।

द्रव्य में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य सब होने पर भी... क्या कहते हैं? जहाँ द्रव्य पर दृष्टि ही है, उस द्रव्य में तीनों हैं। गुण और पर्याय भले हो। **कहीं द्रव्य और पर्याय दोनों समान**

कोटि के नहीं हैं;... आहाहा! द्रव्य और पर्याय दोनों समान कोटि के नहीं है। भले द्रव्य में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य सब हो। आहाहा! परन्तु द्रव्य और पर्याय दोनों समान कोटि के नहीं हैं। ऐसी अनन्त.. अनन्त... अनन्त.. अनन्त.. अनन्त.. पर्याय का तो एक गुण, ऐसे अनन्त.. अनन्त.. अनन्त.. अनन्त.. गुण का एक द्रव्य। आहाहा! केवलज्ञान उत्पन्न हुआ सादि-अनन्त तो कितनी पर्याय हुई? सादि-अनन्त। एक समय ही एक पर्याय रहती है। सादि-अनन्त। सादि-अनन्त पर्याय और भूतकाल की पर्याय भले अज्ञान हो, सब मिलकर एक ज्ञानगुण है। आहाहा!

ऐसे क्षायिक समकित प्रगट हुआ। सिद्ध में भी क्षायिक रहता है। श्रेणिक राजा को क्षायिक समकित उत्पन्न हुआ। नरक में हैं। वही क्षायिक लेकर सिद्ध में जाएँगे। वहाँ से निकलकर तीर्थंकर होंगे। आहाहा! भले नरक में हैं, परन्तु क्षायिक समकिती है। वहाँ से (निकलकर) प्रथम तीर्थंकर होंगे, मोक्ष में जाएँगे। सिद्ध होंगे। क्षायिक समकित उत्पन्न हुआ, वही समकित सिद्ध में लेकर चले जाएँगे। आहाहा!

द्रव्य में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य सब होने पर भी कहीं द्रव्य और पर्याय दोनों समान कोटि के नहीं हैं; द्रव्य की कोटि उच्च ही है,... द्रव्य अर्थात् वस्तु की कोटि-प्रकार तो महान उच्च है! ओहो..! पर्याय तो एक समय में अनन्त गुण की अनन्त पर्याय हैं। एक ही पर्याय नहीं है। प्रत्येक द्रव्य-एक परमाणु में, एक परमाणु में भी अनन्त पर्याय प्रगट है, अनन्त! क्योंकि परमाणु में अनन्त गुण हैं। जितनी संख्या आत्मा में गुण की है, उतनी संख्या एक परमाणु में जड़ गुण की है। आहाहा! और उतनी ही अनन्ती पर्याय प्रगट है। जितने गुण हैं, उसकी अनन्त पर्याय एक समय में (प्रगट है)। पर्याय बिना का कभी द्रव्य नहीं रहता। विशेष बिना सामान्य तो गधे के सींग के बराबर है। समझ में आया? विशेष बिना अकेला सामान्य कभी रहता नहीं। आहाहा! और सामान्य भी कभी विशेष बिना रहता नहीं। सामान्य को प्रति समय पर्याय होती है। आहाहा! ऐसी चीज़ है अन्तर में।

द्रव्य की कोटि उच्च ही है, पर्याय की कोटि निम्न ही है। एक समय की पर्याय, ऐसी अनन्त-अनन्त पर्याय एक गुण की, ऐसी अनन्त-अनन्त पर्याय का एक गुण, ऐसे अनन्त गुण का एक द्रव्य। तो पर्याय की कोटि से द्रव्य की कोटि उच्च हो गयी। आहाहा! एक समकित, चारित्र, ज्ञान, दर्शन, कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान आदि सब गुण की अनन्त

पर्याय प्रगट है। प्रत्येक द्रव्य में अनन्त पर्याय प्रगट हैं। परमाणु में भी वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श आदि अनन्त गुण की अनन्त पर्याय प्रगट है। आहाहा! परन्तु पर्याय की कोटि द्रव्य में नहीं आ सकती। द्रव्य की कोटि बलवान है। ऐसी अनन्त पर्याय निकले तो द्रव्य कभी खत्म नहीं हो जाता। आहाहा!

अक्षर के अनन्तवें भाग में निगोद में रहा। पर्याय में। तो भी द्रव्य परिपूर्ण है और सिद्ध में केवलज्ञान हुआ तो द्रव्य परिपूर्ण है। केवलज्ञान हुआ तो द्रव्य में कमी हुई, क्योंकि बड़ा ज्ञान अनन्त-अनन्त बाहर आया, तो द्रव्य में कुछ कमी हुई, ऐसा है नहीं। आहाहा! वीतराग का मार्ग अलौकिक है, भाई! आहाहा! अक्षर के अनन्तवें भाग में निगोद में पर्याय होती है, तो भी द्रव्य उतना का उतना ही है। बाह्य में बहुत नहीं है, इसलिए अन्दर अधिक पुष्ट है, (ऐसा नहीं है)। अक्षर के अनन्तवें भाग में अनन्त गुण बाह्य में प्रगट है, तो अन्दर गुण में विशेष पुष्टि है, ऐसा नहीं है और केवलज्ञान में केवलज्ञान की पर्याय अनन्त गुण की अनन्त पूरी पर्याय प्रगट हुई तो द्रव्य में कुछ कम हो गया, ऐसा है नहीं। आहाहा! गजब बात है! वीतराग का मार्ग...

केवलज्ञान की यह सब पर्याय आयी, अन्दर से आयी तो कुछ कमी हुई या नहीं? घटाडो क्या कहते हैं? कमी। कमी होती या नहीं? और अनन्तवें भाग में, अक्षर के अनन्तवें भाग में उघाड़ रहा निगोद में तो अन्तर में पुष्टि होगी या नहीं? बाहर में अल्प है तो अन्दर द्रव्य में पुष्टि होगी या नहीं? ना, प्रभु! ना। द्रव्य उस समय भी पूर्ण है और केवलज्ञान हुआ, उस समय भी द्रव्य तो परिपूर्ण ही है। आहाहा! अरे..! द्रव्य की महिमा, द्रव्य की अचिन्त्यता, चमत्कारिक चीज़ द्रव्य क्या है, उसे सुना नहीं। आहाहा! अन्तर में द्रव्य की चमक क्या है! ओहोहो! जिसकी चमक का पार नहीं। चाहे जितनी चमक पर्याय प्रगट हो, फिर भी द्रव्य में कमी होती नहीं। द्रव्य में अल्पता होती नहीं। समझ में आता है? भाषा तो (सादी है)। आहाहा!

यह द्रव्य। उस द्रव्य पर दृष्टि हुई, पूरा हो गया। जन्म-मरण का अन्त आकर, केवलज्ञान पाकर मुक्ति होगी। आहाहा! उसकी कीमत नहीं और बाह्य त्याग की और इसकी, उसकी महिमा। आहाहा! क्या हो?

मुमुक्षु :- बाहर ज्यादा दिखाई देता है।

पूज्य गुरुदेवश्री :- बाहर ज्यादा दिखाई देता। बाहर में दिखाव ज्यादा लगे। उसने त्याग किया हो, अकेली लंगोटी पहनी है, कोई कपड़ा नहीं है। भगवान! कोई व्यक्ति का काम नहीं है, प्रभु! यहाँ तो द्रव्य और पर्याय की बात अभी चलती है। आहाहा! पर्याय अनन्तवें भाग में हो, प्रत्येक गुण की, तो भी गुण में कोई पुष्टि और विशेष है, ऐसा नहीं है। और गुण में से केवलज्ञान, केवलदर्शन, क्षायिक समकित सादि-अनन्त... ओहो! अनन्त.. अनन्त.. अनन्त वीर्य, अनन्त वीर्य प्रगट हुआ तो सादि-अनन्त वीर्य (रहेगा), तो भी द्रव्य में कोई कमी हुई है, बाहर में ऐसा अनन्त वीर्य प्रगट हुआ तो अनन्त काल रहेगा, इसलिए द्रव्य में कुछ कमी है - ऐसा नहीं है। आहाहा!

मुमुक्षु :- .....

पूज्य गुरुदेवश्री :- यह एक चीज़ ऐसी है। आहा..! केवलज्ञान आदि अनन्त-अनन्त गुण पूर्ण प्रगट हो, पूर्ण। तो भी द्रव्य तो पूर्ण ही है। द्रव्य में एक अंश भी कमी हुई है, ऐसा नहीं है। आहाहा! ऐसे द्रव्य की खबर नहीं, प्रभु! आहाहा! और उस द्रव्य की दृष्टि हुए बिना धर्म का प्रारम्भ-शुरुआत होती नहीं। आहाहा! ऐसा ही द्रव्य चैतन्य भगवान विराजता है। अरे..! वह क्या, परमाणु भी ऐसा है। परमाणु में वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श अनन्त भरे हैं। पर्याय में अनन्त गुण पर्याय आ जाए, अनन्त गुण काली पर्याय आ जाए, तो अन्दर वर्णगुण में कुछ कमी हुई है, अल्पता हुई है, ऐसा नहीं है। और एक गुण वर्ण बाहर रहे तो वहाँ वर्ण में पुष्टि हुई है, ऐसा कोई नहीं है। आहाहा! पर्याय की कमी-अधिकता कुछ भी हो, भगवान द्रव्य तो जैसा है वैसा त्रिकाल एकरूप रहता है। आहाहा! उसमें कमी-अधिकता कभी होती नहीं। ऐसा यहाँ कहते हैं। बहिन ऐसा कहना चाहती है। देखो!

द्रव्यदृष्टिवान को अन्तर में इतना अधिक रसकसयुक्त तत्त्व दिखायी देता है... रसकस, देखो! **द्रव्यदृष्टिवान को अन्तर में इतना अधिक रसकस...** रस और कस-माल। ऐसा **रसकसयुक्त तत्त्व दिखायी देता है...** आहाहा! **कि उसकी दृष्टि पर्याय में नहीं चिपकती।** पर्याय में सन्तुष्ट नहीं होती। आहाहा! दृष्टि जहाँ अन्दर द्रव्य पर जम गई है, वह पर्याय पर कहीं चिपकती नहीं, कहीं भी अटकती नहीं। ठीक हुआ, इतना हुआ ठीक हुआ, ऐसे नहीं। आहा..! पूर्ण प्रगट हो तो भी इतना ठीक हुआ, ऐसा नहीं है। पूर्ण का नाथ

तो परमात्मा स्वयं भगवान पूर्णानन्द का नाथ अनादि-अनन्त एकरूप विराजमान है। आहाहा! (ऐसा) **तत्त्व दिखायी देता है कि उसकी दृष्टि पर्याय में नहीं चिपकती। भले ही अनुभूति हो,...** सम्यग्दर्शन और अनुभूति हो, **परन्तु दृष्टि अनुभूति में—पर्याय में—चिपक नहीं जाती।** अनुभूति पर पर्याय चिपकती नहीं। आहाहा! वहाँ दृष्टि चिपकती नहीं। आहाहा! आज सूक्ष्म बात आयी है, प्रभु! माल का माल है। उसका माल है, वह माल है। **दृष्टि अनुभूति में—पर्याय में—चिपक नहीं जाती।** आहाहा!

'**ऐसा आश्चर्यकारी द्रव्यस्वभाव प्रगट हुआ अर्थात् अनुभव में आया!**' आहाहा! **ऐसा ज्ञान जानता है,...** ज्ञान सब जानता है। **परन्तु दृष्टि तो शाश्वत स्तम्भ पर—** शाश्वतस्तम्भ, वज्र का स्तम्भ द्रव्य। आहाहा! एकरूप त्रिकाली अनन्त गुण की सत्ता का एकरूप। पर्याय में कम-अधिक पर्याय कुछ भी हो, द्रव्य में कमी-अधिकता कभी होती नहीं। आहाहा! **ऐसा ज्ञान जानता है, परन्तु दृष्टि तो शाश्वत स्तम्भ पर—द्रव्यस्वभाव पर—जमी सो जमी ही रहती है।** आहाहा! द्रव्य पर दृष्टि तो जमी, सो जमी ही रहती है।

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)